CHETANA
International Journal of Education
Impact Factor
SJIF-5.689
Peer Reviewed/
refereed Journal
ISSN-
Print-2231-3613,
Online-2455-8729

Prof.A.P.Sharma (25.12.1932 - 09.01.2019)

Received on 23rd April 2020, Revised on 27th April 2020; Accepted 29thApril 2020

आलेख

मूल्य बोधः एक दार्शनिक चिन्तन

* डॉ. देवदास साकेत
अतिथि विद्वान–दर्शनशास्त्र
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
ईमेल–devdasphilosophy@gmail.com
मोबाईल– 9479648349

मुख्य शब्द *- प्रबंधक गुणवत्ता, प्रभावशीलता के निर्धारक, उच्च शिक्षा संस्थानों, गुणवत्ता प्रबंधन (QM) तंत्र, संस्थागत गुणवत्ता आश्वासन (QA), प्रयोगात्मक अनुसंधान आदि.*

भारतीय नीति मानव को मूल्य बोध का ज्ञान करती है। मूल्य बोध आदर्श सूचक और व्यावहारिक चिन्तन है, जिसकों जीवित रखने के लिए प्राचीन आचार्यों ने अनेक सूत्रों में लेखबद्ध किया है जो सम्पूर्ण प्राणियों के कल्याण का साधन मार्ग है। उसी प्रकार आचार्य चाणक्य ने भी राष्ट्र के संचालन हेतु मूल्य बोध को जीवन का चरम आदर्श मानते हैं। यहाँ तक राष्ट्र के उत्तरदायित्वों का विश्लेषण बड़े सूक्ष्मदृष्टि से करते हैं। इन सब का विवेचन बड़े ही सूझ–बूझ से कौटिलीय अर्थशास्त्र और अन्य नीतिकारों के ग्रन्थों में किया गया है। इस प्रकार से भारतीय नीति ग्रन्थों में व्यक्तित्व निर्माण अर्थात् आचरण की पवित्रता, सत्य, परोपकार, सदाचार आदि का वर्णन किया गया है।

मूल्य को पाश्चात्य दार्शनिकों ने कई तरह से परिभाषित किया है जो इस प्रकार है। मूल्य शब्द का प्रयोग वस्तुतः अंग्रेजी के 'वैल्यू' एवं मूल्य मीमांसा का वैल्यू 'फिलॉसफी' अर्थात् एक्सियोलॉजी के स्थान पर होने लगा है। ग्रीक 'एक्सियोस' जर्मन 'वैर्ट' फ्रांसीसी 'वालोर' अंग्रेजी 'वैल्यू' इन सभी का प्रयोग पश्चिमी विद्वानों द्वारा किया गया है।

लौत्से जैसे विद्वानों ने आचारशास्त्र और सौन्दर्यशास्त्र से अधिक महत्वपूर्ण मूल्यमीमांसा को स्वीकार करते हैं,[1] क्योंकि मूल्य बोध को यदि ऐतिहासिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो सहज स्वरूपों में न होकर यह सांस्कृतिक और सामाजिक रूपों में अपनी पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है। ऐतिहासिक तौर पर मूल्य बोध का पक्ष सृजनात्मक और सक्रिय अभिव्यक्ति को दर्शाता है, क्योंकि संस्कृति और समाज के रूप में सृष्टि मूल्यों के रूप में एक विश्व की उद्भावना को व्यक्त करता है। इस प्रक्रिया में मूल्य बोध परम्परागत संस्कारों के द्वारा परिष्कृत होता है। यहीं संस्कार सघनतम मूल्य बोध को सहृदयता, श्रद्धा, विवेक आदि विद्याओं एवं उनके आदर्श विषयों के प्रतिमानों में 'सत्य' 'अर्थ' आदि का तात्विक विवेचन के आधार पर मूल्यमीमांसा प्रवृत्ति होती है।

नीतिशास्त्र में ही धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को साधन माना गया है। मानव समुदाय का कोई भी पक्ष हो, वे सभी मानव जीवन के व्यवहार, आचरण की बात करता है। उसी प्रकार दैत्य गुरू शुक्राचार्य की नीति मानव के लिए हितकारक है। इन्हीं के द्वारा ही

[1]पैरी जनरल थियरी ऑव वैल्यू, पृष्ठ 5, मैर्त्स. एक हिस्ट्र ऑव योरोपीयन थॉट इन द नाईन्टीन्थ सेन्चुरी, जि. 4, पृष्ठ 64 और 125।

मानव में कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, धर्म–अधर्म, नीति–अनीति, ज्ञान–अज्ञान, सत्य–असत्य, पाप–पुण्य आदि सभी की चर्चा राष्ट्र के कल्याण हेतु की गई है।[2] बिना नीतिशास्त्र के सम्पूर्ण लोक व्यवहार की कल्पना नहीं की जा सकती है।

आचार्य शुक्र ने मानव के विकास हेतु राज्यधर्म रूपी नीतिशास्त्र की रचना करते हैं। इसी में राजा, मंत्रीमण्डल, प्रशासक, सैन्य सुरक्षा हो याप्रजा सभी को नैतिक नियमों का पालन करना पड़ता है। यही जीवन की मूल आधारशिला है। आज समाज में सबसे बड़ा संकट है तो मूल्यों का संकट है। मूल्यों का मानव ने व्यावसायीकरण करता जा रहा है।[3] मूल्यों का व्यावसायीकरण मानव जीवन के लिए अधिक खतरा साबित होगा, क्योंकि मूल्यों के गुणों को ग्रहण करने हेतु दृढ़इच्छा शक्ति का होना आवश्यक है। दृढ़ निश्चय वाला मानव ही मूल्यों को नष्ट होने से बचाता है। इसी से उसे यशस्वी और कुशल प्रशासक माना जाता है। इस तरह के व्यक्ति ही राष्ट्र निर्माता होते हैं। नैतिकता के उच्च आदर्शों को मूल्य प्रभावित करता है। जिस प्रकार से आचार्य शुक्र, भर्तृहरि, आचार्य चाणक्य, विदुर और आधुनिक युगीन स्वामी विवेकानन्द, गाँधी और विनोबा जैसे राष्ट्र भक्तों का मूल्यों को स्थापित करने में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

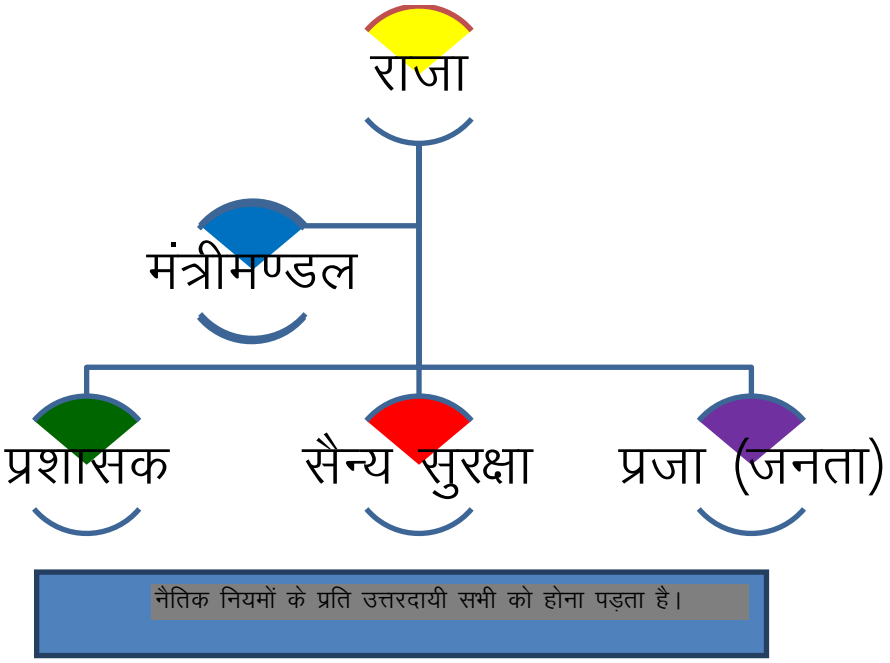

शुक्रनीति भारतीय समाज की भव्य चिन्तन परम्परा के लिए एक दर्पण है। जो भारतीय समाज में नैतिक जीवन के विभिन्न संग्राम के भारी संकट से विमुख न होने के कारण नैतिक जीवन की सार्थकता की उपलब्धि को अपना लक्ष्य मानता है। आचार्यशुक्र स्पष्ट रूप से कहते हैं कि दण्ड के प्रयोग में राजा को पूर्ण सतर्कता का बर्ताव करना आवश्यक है। अनुचित दण्ड देने से लोगों में आतंक फैलता है और प्रशासनिक आधार स्वतः शिथिल होने लगता है। जहाँ पर एक हत्या करने वाले के लिए प्राणदण्ड समुचित है, वही एक चोर के लिए भी वही दण्ड घातक सिद्ध हो सकता है। इसी आधार पर आचार्य शुक्र नैतिक आचरण की सराहना दण्डविधान के पूर्व की है। इसलिए आचार्य ने नैतिकता का बहुत ही सूक्ष्म विश्लेषण किया है।

आज आधुनिक चिन्तकों के सामने अनीति नग्न हो गई है अर्थात् अधिक स्पष्ट हो गई है। धर्म–अधर्म, स्वर्ग–नरक, नीति–अनीति इन सबकी मान्यताएँ निर्जीव दलील मालूम पड़ने लगी है। उनके प्रति न कोई आकर्षण और न ही कोई भय। इसीलिए आज अनैतिकता, चापलूसी, अन्याय और अराजकता का यहीं मूल कारण बन गया है। नीति का आभास ही टूटने लगा है यह परमशुभ कहा जा सकता है कि हम बहुत बड़े भ्रम से बाहर निकल आये। फिर भी मानव के सामने एक उत्तरदायित्व आ गया है। यह है सम्पूर्ण नैतिक जीवन के लिए नवीन आधार को खोज निकालने का।

---

[2]शुक्रनीति, 1/4–5, पृष्ठ 1
[3]शुक्रनीति, 1/11, पृष्ठ 2

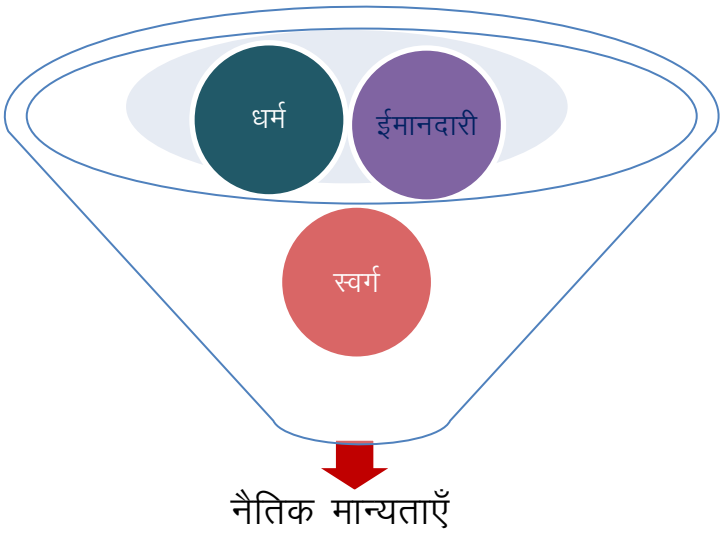

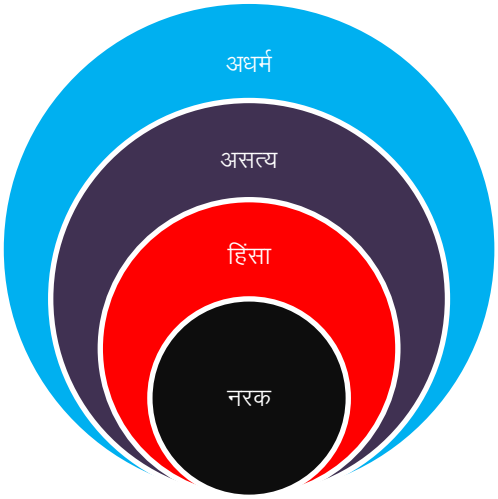

इसी सन्दर्भ में आचार्य चाणक्य ने तत्वज्ञान के प्रायः दो विचाधाराओं का वर्णन करते हैं प्रथम अध्यात्म–विद्या एवं न्याय–विद्या जिसे आन्वीक्षिकी या तर्कशास्त्र कहा जाता है। अध्यात्म विद्या में परमार्थ को महत्वपूर्ण मानते हुए उसके प्रसंग में दुःख और मोक्ष, सत् और ज्ञान का व्यवस्थित प्रतिपादन किया गया है, जबकि सामाजिक और नैतिक जीवन में कला और काव्य लौकिक सुख–भोग, इन सब मूल्यों को अपरमार्थिक मानने के कारण उनका यथेष्ठ प्रमाण अध्यात्म विद्या के अन्दर नहीं मिलता है।

इसी कारण ईश्वर और ऋषि दोनों ही कवि दृष्टा और सृष्टा के रूप में स्वीकार किये जाते हैं।[4] इसीलिए वैदिक पुरुष ऐहिक पदार्थों (रै, रायस्योष) को प्रार्थनीय स्वीकार किया है फिर भी धी–गम्य ऋत के प्रकाश को ही वरेण्य माना है।[5] व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण में श्रेयस और प्रेयस का भेद आध्यात्मिक आचार दर्शन के मूल मंत्र के रूपों में प्रतिष्ठित हुआ है, क्योंकि आत्म–ज्ञान के द्वारा प्राप्त होने वाला आत्म स्थिति स्वरूप से मुक्ति का नाम श्रेयस है। इन्हीं में इन्द्रियों के द्वारा अनित्य वस्तुओं का सुख–भोग ही प्रेयस है।[6]

[4]ईशावास्योपनिषद्, 8, पृष्ठ 39–40
[5]ऋग्वेद, 3/62/10
[6]कठोपनिषद्, 1/2/2, पृष्ठ 229

मूल्य बोध के अध्ययन से उपनिषद् में वर्णन मिलता है कि आत्मा ब्रह्म है और ब्रह्म जगत् का मूल उपादान है।[7] अर्थात् आत्मा के विरूद्ध और अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। इस सृष्टि में सभी पदार्थ आत्म से अनुप्राणित है, फिर भी 'नाम' 'रूप' और 'कर्म' से उपहित होने वाले का अंश मात्र है।[8] इसीकारण विश्व आनन्द से निर्मित है और आनन्द में ही व्याप्त है।

वर्तमान समय बहुत ही गंभीर संकट से गुजर रहा है। इस संकट का मूल कारण भी भारतीय नीति ग्रन्थों से मानव का दूर होना है, क्योंकि मानव ने अपने आपको ही इस सृष्टि से शक्तिशाली समझ बैठा है। इसलिए कि उसके पास आधुनिक तकनीकि है, वैज्ञानिक प्रगति है, प्रगति के मार्ग में बढ़ते–बढ़ते यह भी भूल गया कि जीवन एक मशीन नहीं है। जिसे जब चाहा तब उपयोग किया उसके बाद वह फेंक दिया। जीवन, मूल्य बोध से बँधा हुआ है। यदि जीवन को मूल्य बोध से अलग कर दिया जाये तो निश्चित ही प्रकृति आपना रौद्ररूप दिखायेगी। आज छोटे–छोटे बच्चें वैज्ञानिक प्रगति में उलझ चुके हैं। उन्हें प्राचीन ऋषियों उनके आदर्श मूल्यों आदि का कोई ज्ञान नहीं दिखाई देता है। उन्हें लगता है कि यह सब फलतू की चीज है क्योंकि दुनियाँ सिर्फ पैसों के बल पर चलती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि जीवन का कोई अर्थ नहीं है।

इसी भूल का परिणाम आज पूरा विश्व देख रहा है। जीवन की अन्तिम सांसों के लिए अब मूल्य आदर्श की बातों को समझना प्रारम्भ किया है। वैदिक आचार्यों ने इस संसार को मूल्यों से भर दिया था, किन्तु आधुनिक युगीन मानव ने इसे ही नष्ट करने लगा। इस हेतु मूल्य बोध और प्राचीन आचार्यों के चिन्तन को समझने की आवश्यकता है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि समाज और राष्ट्र के लिए बहुत ही उपयोग होगा। वैज्ञानिक ज्ञान और तकनीकी ने मूल्य बोध और प्राचीन आचार्यों के चिन्तन पर कार्य करने के लिए बाध्य कर दिया है।

*** Corresponding Author:**
डॉ. देवदास साकेत
अतिथि विद्वान–दर्शनशास्त्र
अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
ईमेल–devdasphilosophy@gmail.com, मोबाईल– 9479648349

[7]तैत्तिरीयोपनिषद्, 3/1, पृष्ठ 996
[8]छान्दोग्योपनिषद्, 6/1/4, पृष्ठ 575 एवं बृहद्‌ारण्यकोपनिषद्, 1/4/7, पृष्ठ 189